वार्षिक मूल्य 50 रूपये

धर्म जीवन

अगस्त – सितम्बर – 2017

* मनुष्य होकर पशु रहना
* आत्मिक उन्नति के लिए सात्विक श्रद्धा, दीनता और सत्य विश्वास की ज़रुरत
* अद्वितीय सत्गुरू की अद्वितीय दिनचर्या
* स्वर्ग या नर्क
* रिश्तों को मजबूत बनाएं
* शुभ संग्राम (पदमपुर)
* देव आश्रम डेरा बस्सी में सत्संग

बाकी पृष्ठ 12 का

बहुत गहराई से छुआ गया। गुरू महाराज ने माननीय श्री कनल जी जैसे संवेदनशील प्रबन्धक पैदा किए हैं, उनके जीवन की घटनाओं ने मुझे सदा ही बहुत प्रभावित किया है। कुछ गुरू महाराज के प्रभावों में बैठने, और ऐसे आदर्श प्रबन्धकों के जीवन से प्रेरित होने, और विरासत में मिली कुछ हमदर्दी वा प्रबन्ध की योग्यता को उन्नत करने का अवसर मिला। मेरे जीवन में भी बहुत घटनाएं ऐसी घटी हैं, परन्तु एक दो घटनाएं यहां के इस Topic से मेल खाती हैं।

सर्वप्रथम मैं सदा अपना सौभाग्य अनुभव किया है कि देव समाज की कृपा से मुझे प्रिंसीपल बनने का अवसर मिला। मेरे से बहुत योग्य, अनुभवी जनों को कई बार यह मौके नहीं मिलते, और इस अवसर को पाकर मैंने उसे अपनी योग्यतानुसार सफल करने का यत्न किया है।

अपने अधीन काम करने वालों को सदा अपने परिवार की तरह समझा और उनके दुख सुख का जहां तक सम्भव था ख़्याल रखा।

हमारे महकमे ही ओर से हमें, पी.टी. आई मिलती थी, एक बार जो उन्होंने लेडी भेजी, उसकी काम न करने की आदत मेरे पास पहुँच गई। जब उसने join कर लिया तो मैंने उससे पूछा कि आपके बारे में यह सुनने में आया है, परन्तु मैं आपके काम न करने के कारणों को जानना चाहती हूं। आप खुलकर तकलीफ बताएं, हमने मिलकर काम करना है। उसने बताया कि मैडम मेरे दो छोटे छोटे बच्चे हैं, मैं इतने घण्टे उन्हें छोड़कर आती हूं तो मेरा काम से ज़्यादा ध्यान उन बच्चों की ओर रहता हैं। मैंने उसे कहा कि कल से आप स्कूल 8 बजे आओगी और खेलों की पीरियड लेकर घर चले जाना। वह पीरियड और एक पीरियड आधी छुट्टी के साथ आपको Free मिलेगा, आप अपने बच्चों को पूरा ध्यान दो, लेकिन दूसरे पीरियडज़ में दिल लगाकार काम करना है और स्कूल का खेलों में नाम बनाना है, वह लेडी खुशी खुशी चली गई और 4 - 5 वर्ष वह हमारे स्कूल में रही हमारा स्कूल खेलों में Top के स्कूलों में रहा। परन्तु D.E.O. office ने उसके काम को देखकर एक सरकारी स्कूल में भेज दिया, वह विचारी धन्यवाद देती थी कि आपकी इस सहूलियत से मेरे बच्चे स्कूल जाने के योग्य हो गए। इसमें मेरा कुछ नहीं गया, केवल अपने अधीन कर्मचारी की दिक्कत को दूर किया, उसने इसके इवज़ में स्कूल को बहुत कुछ दिया।

उसके बाद एक और निकम्मी कहलाने वाली P.T.I. मेरे स्कूल में भेज दी। उसके विषय में भी यह मशहूर था कि वह दो पर्स रखती है, एक क्लास के टेबल पर रख देती है ताकि कोई शक न करे कि वह स्कूल में नहीं है, दूसरा लेकर दीवार फांद कर चली जाती है। उससे पूछने पर भी वही समस्या का पता लगा, उसको भी वही सहूलतें दी गई, उसने भी गज़ब का काम किया। जितने भी अध्यापकों के छोटे बच्चे होते, सब के लिए किसी न किसी तरह मेरी कोशिश होती कि उनको ऐसी सहूलियत दी जाए, ताकि वह दिल लगाकर काम कर सकें। जिस मां का बच्चा घर में भूखा हो, रो रहा हो, उसके लिए काम में दिल लगाना बहुत कठिन है, यह एक मां समझ सकती है, परन्तु उन अध्यापिकों ने भी इतना मन लगाकर काम किया कि न केवल रिज़लट सौ फी सदी आते थे, कितने 2 मैरिट में विधार्थी आते थे।

यदि हम अच्छे प्रबन्धक बनना चाहते है, और अपने अधीन कर्मचारियों से काम लेना चहते है। तो पहला नियम है कि उनकी दिक्कतों का ख़्याल रखा जाए। अनुशासन के लिए कभी किसी को कुछ कहना पड़ता था, तो अगले दिल मुझे यह लगता था कि उस अध्यापिक का हालचाल पहले पूछा जाए, ताकि उसको अपनी ग़ल्ती का भी एहसास रहे और मन मुटाव भी न हो।

30 वर्ष के लम्बे समय में यही कोशिश रही कि संस्था में सब एक परिवार की तरह रहें, खुश रहें और सब काम करें। यह प्रेरणाएं हमारे हितकारियों के जीवनों से मिलती थी और अपनी तुच्छ योग्यता के अनुसार कुछ न कुछ उन लकीरों पर चलने का सदा प्रयत्न रहा है। रश्मि जी के अफसर की बात शत प्रति शत: ठीक है- कि नियम मनुष्य के भले के लिए हैं, न कि नियमों की आड़ में उनको दुखी करने, अपमानित करने के लिए। अफसर बनने की धौंस जिसमें आ जाती है, कर्मचारी उसका सन्मान दिल से नहीं करते, दिलों में तो बग़ावतें जन्म लेती हैं, ऐसे बृताव से कोई भी वर्कर दिल लगाकर काम नहीं कर सकता।

(सुरजीत बराड़)

धर्म जीवन

खण्ड 30 अंक 8 – 9
अगस्त – सितम्बर – 2017
वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

मनुष्य होकर पशु रहना

एक बार मैं एक स्थान पर लैक्चर दे रहा था। अपने इस भाषण में एक प्रसंग में मैंने यह कह दिया कि मनुष्य साधारणत: पशु ही है ओर कई बार वह पशु से भी अधिक नीच बन जाता है।

उपस्थित जनों में बैठे एक हाई स्कूल के हैडमास्टर साहिब यह सुनकर चौंक पड़े, उठे और कुछ क्रोधित होकर कहने लगे कि "मनुष्य की तुलना पशु के साथ किसी प्रकार भी उचित नहीं और मनुष्य कभी भी पशु से नीच नहीं हेता।" एक पढ़े लिखे सज्जन के विचार जानकर मैं सोच में पड़ गया और मेरे सामने यह हक़ीक़त खुल गई कि बहुत गिनती में मनुष्यों का यही विश्वास है, जो बहुत बड़ी ज़्यादती है।

किसी किसी विशेष मनुष्य को छोड़कर, आम मनुष्य पशु स्तर पर ही होता है। जैसे पशु के कुछ धुरे होते हैं, जिन पर पशु घूमता है, लगभग वही धुरे आम मनुष्य के होते हैं। जो एक एक मूल्य पशु जीवन प्रगट करता है, यदि वही मूल्य रखकर मनुष्य भी जीता है, तो वह पशु स्तर पर ही खड़ा है।

(1) प्रत्येक पशु का धुरा खुराक है, वह खुराक खाने के लिए जीता है। उसकी प्राप्ति के लिए वह हरकत में आता है। वह सदा खुराक के लिए संग्रामशील रहता है।

(2) पशु जीवन में सुख से पड़े रहना (Inertia) हावी है। वह खा पीकर आराम से लेटना चाहता है। यदि कोई ज़बरदस्ती उससे काम ले ले, तो अलग बात है, परन्तु स्वयं उसकी रुचि आराम तलबी की ही है।

(3) पशु एक सीमा तक अपनी सन्तान के लिए जीता है, वह उनकी परवरिश के लिए प्रयत्न करता है।

(4) पशु के भीतर लिंग वासना है, वह अपनी वासना की समय समय पर तृप्ति चाहता है।

उपरोक्त चारों बातें पशु जीवन के धुरे हैं। प्रत्येक जीव, जन्तु और पशु इन चारों की तृप्ति के लिए जीता है, यदि उससे कोई पकड़ कर काम ले ले, तो ठीक, स्वयं वह काम नहीं चाहता।

पशु का कोई मनोरथ नहीं, यदि हम गहराई से सोच विचार करें तो हम समझ सकते हैं कि मनुष्य के जीवन के भी यही मूल्य हैं। मनुष्य के भी यही धुरे और आर्कषण हैं। मनुष्य साधारणत: खाने पीने के लिए जीता है, अपने बाल बच्चों के लिए जीता है, सुख आराम की तृप्ति के लिए जीता है। उसका कुल संग्राम, उसकी भाग दौड़ सब इन्हीं सुखों की तृप्ति के

लिए होते हैं, इसलिए उसके जीवन का स्तर पशु के जीवन के स्तर तक ही सीमित है। अन्तर उसके खाद्य पदार्थों की विभिन्न किस्मों का हैं, उनकी उत्तमता का है, लिंग साधनों की बहुतायत, आराम के साधनों की उत्तमता और बहुतायत का है, उसकी सन्तान की अधिक गुलामी और उसके प्रति समर्पण का है। मुख्य रूप से मनुष्य का जीवन इन चारों बातों के लिए संग्रामशील रहता है। इनकी पूर्ति और तृप्ति ही मनुष्य का मुख्य मनोरथ होता है। और कोई ऊंचा ध्येय जैसे पशुओं में देखने को नहीं मिलता, उसी प्रकार मनुष्य जीवन में उच्च मूल्य वा उच्च ध्येय का अकाल पड़ा हुआ है।

पशु का अस्तित्व एक शरीर को लेकर ही मुख्य तौर पर होता है। उसमें मान्सिक शक्ति बेशक होती है, परन्तु बहुत सीमित। उसमें रुचियां होती हैं, परन्तु कोई उच्च भाव नहीं होते। इसीलिए पशु केवल शरीर के लिए जीता है। उसकी मान्सिक वा भावात्मिक आवश्यकता सीमित होती है, वह केवल पेट पालने के लिए जीता है।

इसी प्रकार जो मनुष्य केवल शरीर की आवश्यकताओं वा सुखों का तो अनुभव रखता है और उनके लिए भाग दौड़ करता रहता है, परन्तु मान्सिक और भावात्मक आवश्यकता को अनुभव नहीं करता, तो वह पशु स्तर पर ही जीता है। थोड़े ऐसे जन हैं जो मान्सिक खुराक और रुहानी खुराक की आवश्यकता को अनुभव करते हैं। यदि कोई मनुष्य मान्सिक ज्ञान वा हुनर की भी आवश्यकता को अनुभव करता है, तो वह भी अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की उत्तम ढंग से तृप्ति करने के लिए। कुछ विचारशीलों की तो यह राए है कि बहुत सारे पुरुष और औरतें सब ही कोई आत्मा वा रुह नहीं रखते।

जो मनुष्य उच्च ज्ञान की कोई लालसा नहीं रखता, जो मनुष्य किसी स्कूल, कालिज, यूनिवर्सिटी आदि में जाने की आवश्यकता अनुभव नहीं करता, किसी नैतिक नियम की परवाह नहीं करता, वह केवल पशु ही रह जाता है, वह पशु के स्तर पर ही होता है।

पशुओं का जीवन रुचियों के दासत्व का जीवन और नीच वासनाओं का जीवन है। उसी प्रकार जो मनुष्य केवल अपनी रुचियों वा वासनाओं के लिए ही जीता है, जैसा कि आम मनुष्य जी रहा है, वह पशु स्तर पर ही जी रहा है।

मनुष्य ने अपनी सदा बढ़ती हुई अक्ल से अपनी रुचियों की तृप्ति के साधनों को बहुत विस्तृत कर लिया है और कर रहा है।

पशु जीवन से बढ़कर मनुष्य जीवन का एक और धुरा है, वह है मान सम्मान का, पद प्रभुत्व का, निज प्रशंसा का। किसी भी पशु के भीतर उपरोक्त कोई लालसा नहीं होती, केवल मनुष्य ही अंह सम्बन्धी मान प्रशंसा आदि का लालसी है। इस लालसा के लिए वह धन जोड़ता है, बहुत अधिक सामान और सम्बन्धी बनाता है। यह लालसा भी जीवन मूल्यों को ऊंचा नहीं उठने देती, उल्टा कई पहलुओं में पशुओं से भी नीच बना देती है।

पशु बहुत से हितकर होते हैं (हिंसक पशुओं को छोड़कर) वह मनुष्य के लिए सेवाकारी होते हैं। वह बेशक शारीरिक स्तर पर ही जीते हैं, परन्तु उनको पकड़ कर मनुष्य अपने लिए उन्हें लाभदायक बना लेता है। जिस प्रकार गाए, भैंस, भेड़, बकरी, ऊंट, बैल, घोड़ा गधा, हाथी, कुत्ता आदि हितकर और सेवाकारी बन सकते हैं। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए

नीच तो बन जाता है, परन्तु उसके लिए सेवा का स्त्रोत बनना अति कठिन है।

निज सुख और स्वार्थ पूर्ति और अंह शाक्तियों की फसल के जो अंकुर मनुष्य के हृदय में फूटते हैं, उनसे पशु हृदय पवित्र और निर्मल होता है और मनुष्य जिस दर्जे अपने सुख की सिद्धि के लिए घातक बन जाता है, उस दर्जे पशु नहीं बन सकता।

जिस मनुष्य की कोई मान्सिक आवश्यकता नहीं, वह दो टांगों वाला पशु ही है। जो कोई मनुष्य कोई पुस्तक नहीं पढ़ता, काई लाईब्रेरी नहीं रखता, हितकर ज्ञान की प्राप्ति की कोई आवश्यकता अनुभव नहीं करता, उसके लिए किसी हरकत में नहीं आता, वह मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं।

जो कोई मनुष्य भावात्मक आवश्यकताएं नहीं रखता, किसी सात्विक भावना के लिए आर्कषण नहीं रखता, कोई आत्मा वा रुह के अस्तित्व का एहसास नहीं रखता, कोई रुह सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा नहीं रखता, वह मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं। वह एक विद्वान है, अमीर हो सकता है, दो टांगो वाला पशु तो हो सकता है परन्तु उसका जीवन स्तर पशु स्तर का होने के कारण वह मनुष्य नहीं कहला सकता।

इस विषय में गुरु महाराज एक स्थान पर फरमाते हैं: -

"नेचर के विकास में मनुष्य का प्रकाश पशु जगत से हुआ है। पशु जगत के सब जीव एक या दूसरी शक्ति के कार्य को तो देखते हैं। उस कारज को किसी सीमा तक अनुभव भी करते हैं, परन्तु वह किसी शक्ति के रूप को उपलब्ध नहीं करते और न ही कर सकते हैं। उनमें ऐसी मान्सिक शक्तियां नहीं, जिनके द्वारा उन पर शक्ति तत्व प्रगट हो, और वह उसके विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकें। मनुष्य जगत के विकास में अवश्य ऐसी योग्यता रखने वाले कुछ कुछ जन प्रगट हुए हैं जो अपनी मान्सिक शक्तियों के उन्नत होने से उनके द्वारा शक्ति के रूप को उपलब्ध कर सकते हैं, और उसके विषय में सत्य वा तत्व को समझ भी सकते हैं, परन्तु ऐसे मनुष्य भी बहुत हैं, जिनमें यह योग्यता नहीं और वह शक्ति के रूप और उसके विषय में किसी तत्व को समझ नहीं सकते, यहां तक कि उसके सम्बन्ध में कोई उपदेश सुनकर या कोई लेख लिखकर, उसको पढ़कर भी उसको अनुभव या उसके सम्बन्ध में एक या दूसरी बात याद करके और उसको तोते की तरह सुनाकर या बताकर भी, उसके बोधी नहीं होते। उल्टा और पशुओं की तरह यह भी उसके विषय में अज्ञानी और अबोधी ही रहते हैं।"

"मनुष्य आत्मा शक्तिमय है, इसलिए शाक्ति तत्व के सम्बन्ध में अज्ञानी या अबोधी रहकर कोई जन अपने आत्मा के रूप, उसकी भिन्न भिन्न गतियों और उसके फलों वा परिणामों के विषय में भी अज्ञानी या अबोधी रहता है, यह आत्मा होकर भी अपने आत्मा को नहीं जानता, और उसके विषय में किसी सच्चाई को नहीं देखता और धनी, विद्वान और पद रखकर भी उस विषय में पशुओं की तुलना में कोई विशेषता नहीं रखता।"

अपने अस्तित्व का, अपनी आत्मा का ज्ञान पाए बिना जीना, पशु होकर ही जीना है। अपने आपका ज्ञान, अपनी आत्मा का ज्ञान, अपनी सुख लालसाओं का ज्ञान ही धर्म का ज्ञान होता है, इसलिए कहा गया है: - **"धर्म पाए बिना जीना, जन्म अपना यह है खोना, मनुष्य होकर पशु रहना, जन्म अपना यह है खोना।"**

बलदेव सिंह

आत्मिक उन्नति के लिए सात्विक श्रद्धा, दीनता और सत्य विश्वास की जरुरत।

एक सेवक को उपदेश देते हुए, भगवान ने फरमाया कि भगवद् गीता का यह वचन कि "श्रद्धावन, लभते ज्ञानम" अर्थात् श्रद्धावान को ज्ञान मिलता है, किसी सीमा तक एक मूल्यवान सत्य को प्रकट करता है। अंह अनुराग से घमंड की उत्पत्ति होती है, श्रद्धा से दीनता की उत्पत्ति होती है। पहला आदमी जो कुछ नहीं जानता या उल्टा जानता है, उसकी अपेक्षा अपने घमंड की मात्रा के अनुसार अपने आप को ज्ञानी समझता है। दूसरा जन इस पथ भ्रष्टता से भरे घमंड भाव के वशीभूत न होने के कारण अज्ञानी होने पर अपने आप को अज्ञानी ही समझता है और इसीलिए उसके लिए सच्चाई की प्राप्ति हेतु रास्ता खुला हुआ होता है, और यदि उसे वह ज्योति प्राप्त हो जाए कि जिससे कोई सच्चाई देखी जा सकती है तो वह उसके देखने के योग्य हो सकता है, और उस सच्चाई को प्राप्त कर सकता है। नेचर के किसी भी तत्व के जानने के लिए दीनता की आवश्यकता है। विज्ञान की पुस्तकों में भी यह ज़िक्र आता है कि वैज्ञानिक अनुसन्धान में भी वही लोग अधिक सफल होते हैं जिन में दीनता होती है। जहां दीनता न हो, वहां आदमी घमण्ड के वश में होकर और अपने पहले विचारों का पक्षपाती बनकर अड़ बैठता है और एक या दूसरे पहलू में अपने आप को सत्य ज्ञान के लाभ करने से वंचित कर लेता है। आज से बहुत साल पहले सर जगदीश चन्द्र बोस ने यूरोप में जाकर जब पौधों की हिसों (महसूस करने की शक्ति) के सम्बन्ध में अपने प्रयोग (Experiments) दिखलाए तब उन प्रयोगों को साक्षात रुप में सत्य देखकर भी शायद फ्रांस में वहां की एक सांईटिफ़िक सोसाइटी के प्रेज़ीडेंट ने कहा कि मि० बोस! आप ने जिन प्रयोगों के द्वारा अपनी प्रकट की हुई सच्चाईयों का प्रमाण दिखलाया है, उनसे यद्यपि मैं किसी तरह से इन्कार नहीं कर सकता, मगर फिर भी मेरा दिल उन्हें स्वीकार नहीं करता। जब बाहर की दुनिया का यह हाल है कि जिस के सम्बन्ध में प्रयोग करके मोटी आंखों से उनकी सच्चाईयां दिखाई जा सकती हैं, तब आत्मिक जगत जो बहुत सूक्ष्म है, उसकी सच्चाईयों के सम्बन्ध में ज्ञान लाभ करने के लिए यदि किसी जन में **आवश्यक और काफी मात्रा में श्रद्धा भाव की उत्पत्ति न हुई हो,** और वह अपनी ही उल्टी दृष्टि के अनुसार किसी सत्य को मिथ्या और मिथ्या को सत्य देखकर उस पर अड़ बैठता हो तो उसके लिए आत्मिक हित का रास्ता नहीं खुल सकता, और वह आत्मिक जगत के विषय में कोई सत्य ज्ञान लाभ नहीं कर सकता, और ऐसी दशा में उसकी आत्मा का दिनों दिन पतित होना आवश्यक है।

हम: जो यह दावा करते हैं कि देवात्मा के साथ आत्मिक सम्बन्ध स्थापित करके और उनके **देव प्रभावों** को लाभ करके अधिकारी मनुष्यों को वह रोशनी मिलती है और वह बल लाभ होता है, और उनमें वह उच्च परिवर्तन आता है कि जो देवात्मा के देव प्रभावों से कट कर और उनसे विमुख होकर और किसी भी देवी देवता की पूजा या केवल मानसिक शक्तियों के द्वारा या किसी यूनिवर्सिटी की डिग्री लेने आदि से नहीं आता और न हीं आ सकता है, क्या हमारी इस सच्चाई की प्रमाणिकता लोगों के निजी अनुभवों से नहीं हो रही? क्या यह सच नहीं कि बहुत से

अधिकारी आत्माओं में देवात्मा के देव - प्रभावों ने प्रविष्ट होकर जिस प्रकार का आश्चर्यजनक शुभ परिवर्तन पैदा किया है, वह शुभ परिवर्तन कोई कहलाने वाला देवता या गुरु या नबी या हादी या बुद्ध या तीर्थंकर या ऋषि या मुनि नहीं पैदा कर सका? और फिर इसी प्रकार से परिवर्तित लोग जब अपने एक या दूसरे **नीच अनुराग या नीच घृणा भाव से परास्त होकर** उनसे या यूं कहो कि उनके देव प्रभावों से कट गए और उनसे विमुख हो गए और अपने घमण्ड के वशीभूत होकर अपने आप को सही रास्ते पर और देवात्मा को गुमराह समझ बैठे, तब नेचर के आत्मिक जगत के अटल नियमानुसार **उनके आत्मा पतित से पतित होते चले गए। अब अगर वे घमण्डी न होते और श्रद्धावान होते तो इस बुरी दशा को हरगिज़ प्राप्त न होते।**

यहां पर श्रद्धावान से हमारा तात्पर्य किसी प्रकार **के अन्ध विश्वासी पुरुष** से नहीं। हम तो सब प्रकार के अन्ध और झूठे विश्वासों को नष्ट करने के लिए प्रकट हुए हैं, लेकिन हमारा अर्थ श्रद्धावान से यह है कि जो जन आत्मिक जगत की सच्चाईयों के देखने के सम्बन्ध में अपने आप को देवात्मा से बढ़िया नहीं अपितु **हीन समझता** है और उनकी किसी प्रकार की बताई हुई सच्चाई को इसलिए रदद् नहीं करता कि वह **उसके नीच अनुरागी स्वभाव के अनुकूल नहीं,** उसे देवात्मा को इस तौर से अपने से बड़ा उपलब्ध करने और इसलिए उनके सम्बन्ध में **सच्चा विश्वासी** बनने की आवश्यकता है और इस सच्चे विश्वास के आधार पर उनकी जिस सच्चाई को आज वह नहीं समझ सकता, उस सत्य को उसे धीरे-धीरे अनुभव के आधार पर अपने और औरों के जीवन में परखने की ज़रुरत है और उसे नेचर के किसी अटल नियम के अनुसार पाने पर उसकी पड़ताल करने की ज़रुरत है। फिर वह अपने जीवन में उसकी पैरवी करके भी देख सकेगा कि उससे जहां एक ओर उसका कोई पतन नहीं हुआ, वहां दूसरी ओर उसका आत्मिक हित अवश्य हुआ है, और उसका अपना यह निजी अनुभव उस पर देवात्मा की रहबरी की असल कीमत और उसकी सच्ची और अति आवश्यकता को प्रमाणित कर देगा।

नेचर के अटल नियमों के अनुसार विश्वास के बिना थोड़ी देर के लिए भी आदमी का काम नहीं चल सकता। उदाहरणार्थ एक आदमी हर रोज़ अपने पीने के लिए जिस नलके या कुएं या तालाब का पानी प्रयोग करता है या बाज़ार से जो आटा खरीद कर लाता है, वह अपने पहले अनुभव के आधार पर यह विश्वास करता है कि उन में ज़हर मिला हुआ नहीं है, वर्ना अगर उसे यह विश्वास न हो और वह इस शंका से कि उनमें शायद ज़हर मिला हुआ हो, पानी न पीए, या उस आटे की रोटी न खाए, तब वह ज़िंदा नहीं रह सकता। वह अपनी पत्नी पर विश्वास करता है कि उसने जो खाना बनाया है, उसमें उसने ज़हर नहीं मिलाया होगा। अपने रहने के लिए वह जो मकान बनाता है, उसके प्रति वह विश्वास करता है कि रात को उसके अन्दर सोते समय उसकी छत उस पर नहीं गिर जाएगी। जिस रेलगाड़ी में वह सफ़र करता है, वह विश्वास करता है कि वह उसे मंजिल मकसूद तक पहुंचा देगी। जिस दर्ज़ी को वह कपड़े सीने के लिए देता है, उसके प्रति वह विश्वास करता है कि वह कपड़े तैयार कर देगा। जो पत्र वह डाक में डालता है, उसके प्रति वह विश्वास करता है कि वह पाने वाले को मिल जाएगा। एक नेत्रहीन कहीं जाते समय आंखों वाले के पीछे-पीछे यह विश्वास करके चलता है कि वह उसे घर में पहुंचा देगा कि जहां उसने

जाना है। एक बीमार के लिए डाक्टर जो दवाई सुझाता है और दवाई विक्रेता उस नुस्खे के अनुसार जो दवाई तैयार करके देता है, उसके अनुसार निजी तौर पर कुछ भी ज्ञान न रखकर वह रोगी यह विश्वास करता है कि इसके प्रयोग से मेरी मृत्यु नहीं हो जाएगी। एक विद्यार्थी यह विश्वास करता है कि शिक्षक मुझे जो शिक्षा दे रहा है, वह ठीक शिक्षा दे रहा है। जब बाहर की दुनिया में इन्सान को कदम - कदम पर **विश्वास की ज़रुरत है** और विश्वास के बिना उसका काम ही नहीं चल सकता, जबकि कई बार वह विश्वास ठीक भी प्रमाणित नहीं होता, तब आत्मिक जगत में जिन सच्चाईयों को कोई जन स्वयं देखने के योग्य न हो, उसे अपने आत्मिक हित के लिए देवात्मा के सम्बन्ध में उनके मुत्ताल्लिक जिस प्रकार **सत्य विश्वास** की अति आवश्यकता है, उसका अनुमान किया जा सकता है, विशेषकर जबकि अब तक उसने जिस हद तक ऐसा सत्य विश्वास किया हो, उससे उसका **सदा भला** ही हुआ हो।

यदि किसी मनुष्य की समझ में यह बात आ जाए कि मेरे आत्मा में न वे **देव शक्तियां** हैं जो देवात्मा में उत्पन्न और विकसित हुई हैं, न मेरा वह **परम लक्ष्य है,** जो देवात्मा का है, न मेरे वे **त्याग और समर्पण और संग्राम** हैं जो देवात्मा के हैं, इसलिए मैं अपने आत्मिक **भले** के लिए उन्हें अपना गुरु या हादी या रहबर स्वीकार करने पर उन पर कम से कम इतना विश्वास तो करुं, जितना मैं अपने शरीर के रोग के निवारण करने के लिए किसी भी हकीम वैद्य या डाक्टर पर करता हूँ, तब उसकी आत्मिक भलाई का कुछ रास्ता खुल सकता है। हमारी यह आकांक्षा है कि जो आत्मा पूरी तरह अन्धे नहीं हो गए हैं, वे इस सत्य को देखने के योग्य हो सकें और देवात्मा पर सत्य विश्वास की **अति - आवश्यकता को उपलब्ध कर सकें** और स्वयं अनुभव करके देखें कि उससे उनके जीवन का भला होता है या नहीं? **बाकी बाग़ी बन जाना तो फिर भी उनके हाथ में है।**

इस दुनिया में **"साहब सलाम"** का जो रिश्ता होता है, वह तो तुम्हारा अभी तक बाकी है लेकिन हमारे साथ तुम्हारा कोई आत्मिक रिश्ता नहीं है। काश! जिन उच्च भावों के द्वारा देवात्मा के साथ **किसी का आत्मिक सम्बन्ध** हो सकता है और उनका पैदा होना जिन शर्तों पर निर्भर है, वे शर्तें पूरी हों और जिन - जिन लोगों की आत्मिक भलाई का रास्ता बन्द है, वह उन उच्च भावों के पैदा होने से खुल सके।

इस समय शरीर के साथ न देने पर भी हमने उसे इसलिए घसीट कर लगाया है कि यदि हम आत्मिक पहलू में आपके लिए कुछ हितकर हो सकें तो यही हमारी ओर से आपकी बहुत बड़ी सेवा है।

पूजनीय भगवान् के इस उपदेश के लिए उन माननीय साहिब ने पूजनीय भगवान् को बहुत - बहुत धन्यवाद दिया और पूछने पर कहा कि यद्यपि आज से कुछ साल पहले मेरे जीवन से परोपकार सम्बन्धी जो कार्य होते थे, वे अब नहीं होते और पहले जो किसी भलाई के काम के लिए **जी जाता था,** वह अब नहीं जाता, लेकिन आप के सम्बन्ध में मेरी श्रद्धा की दृष्टि कायम है। मैं यह अवश्य अनुभव करता हूँ कि चाहे मैं कहीं भी रहूँ, महसूस करता रहूंगा कि मेरे जीवन में आपके द्वारा बहुत बड़ा कल्याण आया है और यदि मेरी आत्मिक उन्नति का क्रम आगे न भी चल सके, तब भी मैं समझता हूँ कि आप मेरे गुरु हैं, और आप के द्वारा ही मुझ में यह बेहतरी आई है।

(जीवन तत्व 21 अगस्त 1927)

अद्वितीय सत्गुरू की अद्वितीया दिनचर्या

<u>निकम्मे पन के लिए गुरू महाराज की गहरी घृणा – 2</u>

1918 में भगवान सेहत की बहुत नाज़ुक हालत में सोलन पहुँचे, एक प्रसिद्ध डाक्टर ने उन्हें बहुत ज़ोर देकर यह नसीहत की कि उन्हें लम्बे समय के लिए आराम की आवश्यकता है। कनल जी लिखते हैं कि मैं बहुत हैरान था कि जब भगवान थोड़ा सा चलने के योग्य हुए, वह अपने कमरे से बाहर आए और वह अपने हाथों से अपने पौधों की सेवा करने लगे, कुछ समय के लिए वह कुर्सी पर बैठने के योग्य हुए तो उन्होने उनके लिखने के लिए मेज के लिए कहा ताकि वह लिखने का काम कर सकें। जब मैंने किसी सेवक से पूछा कि ऐसा काम गुरू महाराज को क्यों दिया गया? वह उदास मुख से कहने लगे "मैं क्या कर सकता था?" परम पूजनीय भगवान देवात्मा ने इसके लिए हुक्म दिया और कहा कि कुछ न करने का दुख मुझे शारीरिक पीड़ा से अधिक गहरा दुख देता है।"

उन्होंने काम जारी रखा, उसका इतना उनके शरीर पर बोझ पड़ा कि हालत पहले से भी बिगड़ गई।

3 - सन 1919 में ही, सोलन में ठहरने के दौरान महाराज 2 महीने लगातार दाढ़ वा सिरदर्द से बेहद परेशान रहे। इसके कारण रात को बहुत कठिनाई से कुछ देर सो सकते थे। फिर भी कितने कितने घण्टे महाराज प्रतिदिन मिशन के भिन्न कामों में व्यस्त रहते, विशेष रूप से कुछ कामों का उनके दिमाग और सोचने की शक्ति पर बहुत बोझ पड़ता। भलाई के अथाह अनुराग के कारण, जितना सम्भव था वह काम करते रहे और अपने कामो में इतना संल्गन हो जाते थे कि अपनी शारीरिक पीड़ा भूल जाते थे। निम्नलिखित उनके मुबारक शब्दों से उनके भलाई के प्रेम की गहराई को कुछ न कुछ अनुभव कर सकते हैं: -

"यदि हमारा यह शरीर स्टील का बना होता, जिसे न भोजन की आवश्यकता होती और न आराम की और न ही शरीर की यह व्याधियां होती, मैं 24 घण्टे लगातार काम कर सकता"

4 - एक समाज का पुराना लेखक आंखों, की बीमारी से पीड़ित था, तो उसको जो काम दिया गया था, कनल जी लिखते हैं कि वह काम मुझे दिया गया। काम इतना महत्वपूर्ण था, जिसके लिए पूरे ज्ञान और अनुभव की आवश्यकता थी, मैं इस क्षेत्र में नया था। मुझे भगवान की रहनुमाई की आवश्यकता थी ताकि उसको सही प्रकार से समाप्त कर सकूं। मैंने अपनी लिखित को पूरा कर लिया, परन्तु भगवान के खराब स्वास्थ्य को जानकर मैं उन्हें तकलीफ देना नहीं चाहता था। भगवान जानते थे कि मैंने तय समय में उस काम को पूरा करना था, ताकि वह छपने के लिए प्रैस में जा सके, उन्होंने मुझे बुला भेजा और उस काम के बारे में पूछा। मैने उत्तर दिया कि मैंने पूरा कर लिया है, परन्तु आपकी शारीरिक हालत और कमज़ोरी को देखकर मैंने आपके सामने पेश नहीं किया। इस पर बहुत ही कृपा करके उन्होंने फरमाया, "क्या तुम जानते हो कि हम विविध सम्बन्धों में बंधे हुए हैं? प्रैस में आदमी इस लिखित का इन्तज़ार कर रहे होंगे। रीडर को यह समय पर मिलना चाहिए। मेरी सेहत के विषय में आपका ख़्याल इन्तज़ार कर सकता हैं, परन्तु वह इन्तज़ार नहीं करेंगे। और जिम्मे का काम किसी भी

कीमत पर समय पर होना चाहिए।"

भगवान की हर पहुलु में सम्पूर्णता का हम मनुष्यात्मा अनुमान भी नहीं कर सकते। धन्य हैं भगवान!

5- परम पूजनीय भगवान को जैसा कि ऊपर बताया गया है, आलस्य और निकम्मेपन से सख़्त घृणा थी, जैसे कि कहलाने वाले साधुओं की अवस्था है। कई बार वह अपने जोरदार भावों का वेदान्त मत की "शान्ति और आनन्द" की शिक्षा पर वर्णन करते थे। एक बार उन्होंने फरमाया।: -

"वेदान्ती नेचर को ignore करते हैं, जो वास्तव में है, ऐसी बातों के पीछे भागते हैं, जो कल्पना है। उनके आदर्श सब कल्पना पर आधारित हैं। वह दुनियां में दुखों को देखते हैं। इससे आगे सम्बन्धों में आने वाले दुखों को देखते हैं। इसलिए उन रिश्तों को स्वीकार नहीं करते और उनके साथ सम्बन्ध काट लेना चाहते हैं और उन दुखों से भाग कर जंगलों में चले जाना चाहते हैं। सब प्रकार की जिम्मेवारियों से नाता तोड़ना चाहते हैं इसका अर्थ क्या है? उसका अर्थ है कि वह में अपना समय लगाकर "आनन्द और शान्ति" प्राप्त करना लक्ष्य बनाना चाहते हैं। उनकी ज़िन्दगी तो बन जाती है, परन्तु क्या नेचर हमसे यही चाहती है? क्या नेचर बार बार इस सचाई को हमारे सामने नहीं लाती कि जिस अंग का प्रयोग न हो वह नकारा होकर मर जाता है। जो पशु धरती के नीचे अन्धेरे में रहते हैं, वहां उन्हें आंखों के प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती, नेचर उनसे उन उपयोगी अंगों को छीन लेती है। उसी प्रकार पूर्णत: स्वार्थी साधुओं, जो किसी के लिए कुछ नहीं करते, उनकी जीवनी शक्ति क्षीण हो जाती है, और नेचर उन्हें उनकी आत्मिक मौत की सजा सुनाती है। यदि आप नेचर का अध्ययन करें, तो नेचर सदा उन्हीं अस्तित्वों का विकास करती है, जो सम्बन्धों में भले व्यवहार करते हैं नेचर ने मान्सिक शक्तियों का विकास क्यों किया? किसी की तरफ से कोई प्रार्थना नहीं की गई थी। नेचर ने मनुष्यों और पशुओं में कुछ भलाई उत्पादक सात्विक भावों को क्यों पैदा किया? सम्बन्धों में बेहतरी लाने के लिए। यही विकास का नियम है और यही ज़िन्दगी का नियम है। इसलिए जो विश्व के किसी भाग में भलाई नहीं लाते वह नष्ट होने के लिए हैं।"

इसलिए भगवान देवात्मा के शिष्य होकर हमें अपनी अवस्था के अनुसार जहां तक सम्भव हो अपनी भलाई, दूसरे जगतों की भलाई में अपना अधिक से अधिक समय देना चाहिए, इसमें हमारे गुरू की कुछ इच्छा पूर्ति हैं, क्योंकि वह निक्म्मे और आलसी मनुष्यों को सहन नहीं करते थे, बेहद दुखी होते थे।

सुनजीत बराड़

सूचना

जो जन अपना नियत दान तो दते हों, परन्तु घृणा करते हों या अपनी कामना के पूरा न होने पर बिगड़ बैठते हों..... ऐसे जनों को मैं सेवक नही रखना चाहता।

- देवात्मा

स्वर्ग या नर्क

पिछली पत्रिका में एक लेख निकाला था जिसका हैडिंग था, स्वर्ग ओर नर्क। उसमें कुछ सचाईयां बताई गई थी कि हम अपने व्यवहारों से ही इस पृथ्वी पर और अन्य मनुष्यों के जीवनों में स्वर्ग और नर्क की उत्पत्ति करते हैं। मुझे एक जीवनी पढ़ने का सुअवसर मिला, जिसमें 2 जनों के व्यवहारों की घटनाएं थी। जिसमें एक जन ने अपने व्यवहार से स्वर्ग पैदा किया और दूसरे ने नर्क।

रशिम खुराना जो रेडियो स्टेशन पर सीनियर आफीसर रही हैं जिनकी कर्तव्य निष्ठा और उत्साह बहुत सराहनिय रहा है। तीन बच्चों के साथ नौकरी के साथ वह Ph.D. की तैय्यारी में थी जब बच्ची 6 महीने की थी वह लिखती हैं केन्द्र से एक नये केन्द्र निर्देशक आ गए श्री पी. पी., सेतिया साहिब। पठान सा व्यक्तित्व, हंसमुख, कार्य की पूरी जानकारी। हर कर्मचारी पर पारदर्शी नज़र। कविता का बहुत शौक इन गुणों से वह हर महफिल की रौनक थे, ऐसे आदमी के साथ काम करना खाला जी का वाड़ा नहीं था। न जाने किस विश्वास के साथ उन्होंने भारी भरकम सात - आठ प्रोग्राम सैक्शन मुझे सौंप दिए। कुछ महीने चकरी की तरह घूमते निकले। स्टाफ के साथ उनके सहयोग ने मुंह पर ताला लगा रखा था।

मेरी विडम्बना यह थी कि सोचने लगी थी अब मैं अपना थीसिस तो भूल ही जाऊं। हालांकि मेरा आखिरी अध्याय रहता था। मैं उन पेपरों को डिब्बे में डालने की सोच रही थी। अचानक एक दिन चमत्कार हुआ।

सेतिया साहिब को पता लगा कि मेरा थीसिस अधूरा है और मुझे अपने कर्तव्य पालन में समय नहीं मिल रहा। अचानक आकर उन्होंने मुझसे पूछा कि कितने दिनों का काम है। एक दम जब उन्होंने कहा कि तुम्हारी एक महीने की छूट्टी मन्ज़ूर करता हूं, मैं हक्की बक्की रह गई। मैंने रात दिन लगकर अपना काम निपटाया और छुट्टी पर चली गई।

10 - 12 दिन बाद सर का फोन आया कि कितना काम रह गया है, मैंने कहा सर चल रहा हैं, तो कहने लगे "चलाईए नहीं भगाईए। क्योंकि मेरी ट्रांस्फर हो गई है।

अब छुट्टी ख़त्म होने में दो दिन रह गए थे, तो सर का फिर फोन आया कि "आप अपनी छुट्टी एक हफ्ता और बढ़ा लीजिए क्योंकि मेरा रिलीवर एक हफ्ते बाद आएगा" उनके स्वर में आदेश, आग्रह और स्नेह सब कुछ था। मेरा थीसिस ख़त्म हो गया, सेतिया साहिब चले गए और प्रशासन का एक गुर बता गए: -

"नियम मनुष्य के भले के लिए हैं,
न कि मनुष्य नियमों के लिए"

जहां ऐसे अफसर हों, उस प्रशासन में स्वर्ग का वास होता है। ऐसे अफसर के आगे हम नत - मस्तक हैं।

रश्मि जी ने अपने सेवा काल की एक दूसरी घटना लिखी है। जिनको रेडियो सुनने का शौक था और हमसे भी उमर में बड़े हैं, शायद उन्हें याद हो कि आकाशवाणी जालन्धर जब विकसित हो रहा था, उस समय की आधार स्तम्भों में से दो ढिल्लों बहने थी, एक हरबंस ढिल्लों और दूसरी प्रकाश ढिल्लों। 70 के दशक में भी हरबंस जीन्स कुर्ता पहनती थी, लेकिन प्रकाश सीधे साधे कपड़े।

हरबंस ढिल्लों की आवाज की लोकप्रियता सरहद पार तक थी। प्रोग्राम "देस पंजाब" का उदेश्य भी पाकिस्तान के श्रोताओं को आकर्षित करना था। कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण था मसरतबाजी द्वारा ख़तों के जबाब। वह खतों का इस अदा से उत्तर देती थी कि सुनने वालों को लगता कि बस मुझसे ही बात कर रही है। सरहद पार से ख़तों का ढेर लगा रहता उन दिनों प्रोड्यूसर ने हरबंस को खुली छुट्टी दे रखी थी, लेकिन अनुशासन की सीमा में रहना उसकी रगों में था।

समय के साथ आफिस का महौल बदलता है, अफसरों जैसी अफसरी का समय आ गया। हरबंस मनमानी करती है, यह कह कहकर कई जनों ने अफसर के कान भरने शुरू कर दिए। उसकी अलोचना शुरू हो गई हरबंस का कलाकार मन आहत होने लगा। एक दिन तो यह आर्डर हो गया कि हरबंस देस पंजाब कार्यक्रम करेगी, परन्तु ख़तों के जबाब नहीं देगी। अब अफसर के साथ कौन अड़े। कलाकर मन अकेला अपमानित होकर लड़खडा गया और सह न सका।

एक दिन समाचार आया - "हरबंस खड़ी नहीं हो

पा रही, दफतर न आ पाएगी।"

किसी ईलाज से लाभ न हुआ, वह जीन्स टाप वाली पोनी किए, पर्स लटकाती, मुस्कराती, दिलों में राज करने वाली हरबंस ढिल्लों व्हील चेअर पर बैठी थी। छुट्टियां कब तक चलती, आख़िर सरस्वती मन्दिर आकाशवाणी से विदा ली।

एक अफसर ने आफिस को स्वर्ग जैसा महौल देकर अपनी अधीन कर्मचारियों से दुगना काम लिया था, सबका दिल जीत लिया था, दूसरे अफसर ने उसी महौल को नर्क बना दिया।

हमारी बदकिस्मती है कि ईर्षा के वश हम दूसरों की योग्यताओं को, उनके कारनामों को मिटाना चाहते हैं, स्वयं वैसा बनने का यत्न नहीं करते, जैसे बीरबल को अकबर ने कहा था कि यह लकीर को बिना मिटाए, छोटा करके दिखाओ, अकबर ने लक़ीर खींच दी, बीरबल ने उसके साथ ही उससे बड़ी लकीर ख़ीच दी। कहने का तात्पर्य यह है कि हम स्वयं बड़ा काम नहीं कर सकते, दूसरे के कामों की अलोचना करके उसे छोटा करना चाहते हैं।

आगे रश्मि जी लिखती हैं कि समय का चक्र घूमा और सेतिया साहिब उससे भी ऊंचे पद पर फिर आकाशवाणी जालन्धर में आ गए। वह अपनी बातें कहते, पर औरों की भी सुनते, उनसे बात करते डर नहीं लगता था। एक दिन केन्द्र के कलाकारों की चर्चा करते हुए मैंने हरबंस ढिल्लों की बात बताई। मैं भावुक हो गई। आंखों में आंसू आ गए। केन्द्र निदेर्शक ने उसी समय पूछा, "कहां है उसका घर? क्या इस समय घर पर मिलेंगी" जब मैंने हां में जबाब दिया तो वह तुरन्त खड़े हो गए कि चलिए मेरे साथ, ड्राईवर को बुलाया और उनके घर पहुँच गए, मैंने सोचा हालचाल पूछने आए हैं, दीदी को अच्छा लगेगा।

पर क्या कमाल होते हैं, कुछ व्यक्तित्व! दरवाज़ा खुलते ही पूछा, "हरबंस कहां छुपकर बैठी है? अपना परिचय स्वंय ही दिया" हरबंस मैं पी. पी. सतिया, क्या हाल है- दिल्ली से तेरा नाम सुनता जालन्धर पहुँच गया, आप हो कि घर बैठ गए।"

सर ने स्वयं ही कुर्सी खींच ली। हरबंस तो अवाक बैठने का प्रयत्न करने लगी। हम आगे बढ़ते, इससे पहले ही सेतिया साहिब ने बाहों में भरकर उन्हें बिस्तर से उठा दिया।

"चलो, अब मैं स्टेशन पर आ गया हूं, अब बिस्तर छोड़े" लगता था कि उसे हौसला देने की कोई कसर सेतिया साहिब छोड़ना नहीं चाहते थे। हरबंस ने अपनी विवशता ज़ाहिर की, परन्तु वह कहां छोड़ने वाले थे।

कहा कि चलो तुम केवल ख़तों के जबाव दे दिया करना, आकर केवल रिकार्डिंग करवा दिया करें। दफतर की गाड़ी आपको लेने और छोड़ने आएगी। गार्ड आपको स्टुडियो तक ले जाएगा।

हरबंस स्टुडियों में आने लगी, श्रोतावर्ग भी लहरा उठे, हरबंस फिर रवां हो गई। बेशक पहले जैसा जनून नहीं रहा था, परन्तु कलाकार को जो सम्मान वा प्यार चाहिए था, वह मिल रहा था, सेतिया साहिब की कोशिश होती कि स्टुडियो में एक बार उन्हें ज़रूर मिलें। एक सवेदनशील कलाकार के लिए जो वह कर सकते थे, उन्होंने किया। एक साल के बाद उनका तबादला हो गया। उसके बाद लोग जो कर सकते थे, उन्होंने किया।

ऐसी ध्वनि निकलने लगी, "सभी स्टुडिया व्यस्त हैं, हरबंस की रिर्काडिंग अभी नहीं हो सकती, यह व्हील चेअर अभी बाहर रहने दो, आज आपका प्रोग्राम नहीं है मैडम," कलाकार मन फिर आहत हो गया, वह घर बैठ गई फिर उठ न पाई।

उसी नर्क भरे महौल ने जो हरबंस को नकारा बना दिया था, एक स्वर्गिय जन के आने से फिर स्वर्ग का महौल बना, परन्तु सवेंदनहीन जन कैसे जान सकते हैं कि कलाकारों का दिल तो कांच की तरह होता है, जो टूटकर बिख़र जाता है।

ऐसे सवेदनाहीन जन हर संस्था, हर समाज वा प्रबन्ध में होते हैं, जब उनका राज हो जाता है, तो योग्य, कर्मशील जनों का अपमान होने लगता है और कार्य को जो हानि पहुंचती है, वह अलग बात है।

प्रबन्धक के लिए सवेदशील होना अधीन कर्मचारियों के लिए बहुत सौभाग्य की बात होती है।

रश्मि जी की इन घटनाओं को पढ़कर मेरा दिल

शेष पृष्ठ 2 पर

रिश्तों को मजबूत बनाएं

आज देश के पढ़ेलिखे नवयुवक पश्चिमी जीवन की अंधाधुध नकल कर रहे हैं, इस के बावजूद दुनिया में भारत को आज भी एक धार्मिक व आध्यात्मिक देश समझा जाता है। आज भी संयुक्त परिवार इस देश में कोई अपवाद नहीं समझे जाते। पर लेखक के देखतेदेखते पिछले 50 - 60 सालों में सहनशीलता, धैर्य, अपनत्व, एकदूसरे के सुखदुख में काम आने की तत्परता आदि मूल्यों का पतन ही हो रहा है।

बड़े व अमीर घरानों की तो बात ही छोड़ दें। वहां तो 1 बाप के 2 बेटे भी आपस में मिल नहीं पाते। अंबानी व बजाज बंधु कोई अपवाद नहीं हैं। अनेक अमीर संयुक्त घराने व्यापार व सत्ता के बोझ से टुकड़ेटुकड़े हो कर अलग हो रहे हैं। परंतु संयुक्त परिवारों का यह बिखराव अब मध्यवर्ग में भी तेजी से फैल रहा हैं।

जब तक आप संसार में सक्रिय हैं, छोटाबड़ा रिश्तों का दायरा सभी का रहता है, जिन के साथ नातेरिश्ते निभाने पड़ते हैं। प्राय: सभी जगह यह देखा जाता है कि हम दूसरों पर तो उंगली उठाते हैं पर अपनी पतनशील मनोवृत्ति व कामनाओं की ओर कोई नहीं देखता।

हर घर में रसोई के लिए छोटेबड़े 2 - 3 चाकू रहते ही हैं। अब उन चाकुओं का क्या उपयोग हो, यह आप पर है। एक डाक्टर चाकू की सहायता से शल्यक्रिया कर मरीजों को बचाता है। वहीं अनेक शहरों में बेकार नवयुवक चाकू का इस्तेमाल हत्या, लूटपाट, चोरी आदि में करते पाए जाते हैं। आखिर में पुलिस व न्यायालयों के घेरे में एक बार आ जाने पर जीवन भर की उलझन सांप को गले में लपेट कर रखने जैसी हो जाती है। विषय रिश्तों का है। जैसा ऊपर चाकू के उपयोग के बारे में कहा गया है, यह हमारे हाथ में है कि उसे कैसे काम में लाया जाए। इसी तरह जब कोई रिश्तों का प्रयोग केवल अपने स्वार्थ के लिए करने लगता है तब संयुक्त परिवार से कट कर अलग रहना उस के लिए नियति बन जाती है।

आप एकदूसरे पर, संसार, रिश्तेदारों, निकट के संबंधियों पर दोष लगाते हैं लेकिन सभी में कमी निकालना बहुत आसान है। अपनी ओर कोई नहीं देखता कि मैं उस रिश्ते में क्या पार्ट अदा कर रहा हूं। हम यदि रिश्तों में मन की पंसदनापसंद को महत्त्व देंगे तो जो लोग हमारी चापलूसी करते हैं या हमारा काम कर देते हैं वे ही हमारे प्रिय बन जाएंगे, पर सारी बातें किस के जीवन में मनमुताबिक होती हैं? न अमेरिका के राष्ट्रपति की न भारत के प्रधानमंत्री की। मन के बदले हम रिश्तों को बुद्धि से परखें व व्यवहार में लाएं तो मन के आवेगों, पसंदनापसंद से बच सकते हैं और समझदारी से अपने उस दायरे से अच्छे रिश्ते रख पाते हैं जिन से रोज का काम पड़ता है।

सब से पहले हमें प्रेम व आसक्ति के अंतर को समझना होगा। सार्वजनिक प्रेम का दायरा विश्व के सभी प्राणियों, जीवनों व जड़ पदार्थों के लिए होता है। पर हम जिस भी काम या रिश्ते में हाथ डालते हैं उसी में आसक्त हो जाते हैं। बच्चे अपने खिलौनों से, युवक युवती से, गृहिणी अपनी नई कालीन से, पतिपत्नी आपस में यानी जिस वस्तु या रिश्ते का हम उपयोग करते हैं, वह अपनी पसंदनापसंद के बूते पर करते हैं न कि बुद्धि से तोल कर।

आसक्ति स्वार्थ से बनती है, सार्वजनिक प्रेम मे सारा संसार समाया होता है। जब मन की मैं व मेरा, यह भावना निकल जाए, तभी सफलता मिलेगी। अन्यथा मैं, मेरी पत्नी बच्चे तो आसक्ति के दायरे में बाकी लोगों से

कोई सरोकार नहीं रह जाएगा। जहां आपसी लगाव सीमित होने लगता है वहीं बाकी के रिश्ते बेमानी लगने लगते हैं। पश्चिम के विवाह में मैं व मेरी पत्नी या पति की आसक्ति ही नहीं बल्कि केवल मैं की भावना ही इतनी गहरी व विषाक्त हो जाती है कि आखिर विवाह तलाक में समाप्त हो जाते हैं। बुराई आसक्ति में नहीं बल्कि उस का दायरा सिकुड़ने में है।

नजदीकी रिश्तों को बनाए रखने के लिए दूसरा सिद्धांत यह हेाता है कि हम उन के प्रति जिम्मेदारी निभाएं न कि हक जताएं। हम अपना कर्तव्य करते चलें, दूसरों से कुछ उम्मीद न रखें। हुआ तो ठीक, न हुआ तो ठीक। ऐसा होने पर बारबार मन को चोट नहीं लगेगी। भारत के परिवारों की यही परंपरा रही है कि सब अपनाअपना काम करते चलें, कहीं हक न जमाएं व दोष न निकालें।

सास, बहू, जेठानी, देवरानी, भाई भाई आदि रिश्ते तभी निभेंगे जब तक हम अपनी जिम्मेदारी निभाते चलें, दूसरे हमारे लिए क्या करते हैं, उस से कोई मतलब न रखें, पर अब तो अंबानी व बजाज बंधुओं की तरह मैं क्या कर सकता हूं? मेरा हक, मेरी सत्ता, मेरा भाग मुझे मिलना ही चाहिए। जब तक धीरूभाई अंबानी व कमल नयनजी बजाज रहे, उन की देखभाल में सारा कार्य इतनी तेजी से आगे बढ़ा कि उन्होंने बाकी सभी को पीछे छोड़ दिया। यही उन की गलती रही कि उन्होंने अपने बेटों को जांचा नहीं, वरना यह नौबत नहीं आती। अपने जीवनकाल में ही 2 अलग अलग भाग सौंप देते तो स्वस्थ प्रतिस्पर्धा रहती, विद्वेष व कोर्टकचहरी नहीं।

तीसरे सिद्धांत के रूप में इस प्रव्रत्ति की सही जांच को आधार बनाना चाहिए। मेरी पत्नी ऐसी ही है, मेरा पति दफ्तर से चिड़चिड़ा हो कर आता है, हम ने यह स्वभाव समझा यानी जिनजिन से संपर्क होता है, सब का उचित मूल्यांकन कर लें। हर कोई अपने स्वभाव के अनुसार ही कार्य कर रहा है, तो फिर कैसी हैरानी और कैसी परेशानी?

रिश्ते निभाने का अंतिम आधार यह धारणा है कि जीवन देने के लिए है, बटोरने के लिए नहीं। इस का अर्थ यह भी नहीं कि आप अपनी जमापूंजी बिना सोचेसमझे सब को देते चलें। एक मानसिक प्रवृत्ति की बात हो रही है। मेरी भावना मदद करने, सुखदुख बांटने, देते रहने की प्रवृत्ति से ओतप्रोत है या लेने की, बटोरने की। हमें औरों से क्या मतलब, यह भावना आते ही जीवन में विकृति आ जाती है।

हम दूसरों के काम आ सकते हैं तो इसी से हमारा होना उपयोगी व सार्थक होता है। जिस तरह टूटा हुआ हाथ आप के काम नहीं आ सकता, परंतु उसे फिर भी आप प्यार से गले में लटकाए फिरते हैं, इसी तरह अगर आप का कोई भाई या अन्य संबंधी कभी आप के काम न आ सकने की हालत में हो तो वैसा ही प्यार आप का उस से भी होना चाहिए। वह आप के काम न भी आ सके और आप उस के काम आ सकें तभी रिश्ते की मजबूती पता लगती है। अगर ऐसी भावना न रहे तब तो हम अपने को ही खोखला और नकारा साबित करेंगे। अत:सदैव मदद के लिए तत्पर, प्रवृत्ति रखें तो आप के रिश्ते मधुर बने रहेंगे।

अत: रिश्ते संकुचित आसक्ति नहीं बल्कि सार्वजनिक प्रेम के आधार पर जुड़ते हैं। अपने कर्तव्य का पालन करने, सभी स्वभावों की जांचपरख कर वैसे ही आचरण करने व देते रहने की प्रवृति आदि स्तंभों पर जीवन का ढांचा खड़ा करें, फिर आप को कहीं दिक्कत या रागद्वेष के प्रहारों का सामना नहीं करना होगा।

(सरिता से साभार)

शुभ संग्राम (पदमपुर)

श्री गंगानगर की सुबह की सभा के बाद तीनों धर्म सम्बन्धी श्रीमान बलदेव सिंह जी, श्रीमान बलबहादुर सिंह जी, श्रीमान अग्रवाल साहिब के साथ श्री बी. पी. सिंह जी की कार द्वारा पदमपुर पहुँच गए, वहां रात को 8.30 बजे सभा की गई। मल्लेका से श्रीमान बलदेव सिंह जी, गुलाबेवाला से एक नौजवान सम्बन्धी को लेकर पहुँचे। श्रीमान खुशहाल सिंह जी बंगा से पहले ही पहुँच चुके थे।

पहली सभा 8:30 बजे रात :- सभापति श्रीमान बलबहादुर सिंह जी। श्री सभापति जी ने बताया कि आज कारों, हवाई जहाजों आदि में सफर करके पुराने वाहनों की ओर मुड़ा नहीं जा सकता। आज की शिक्षा संस्थाओं को छोड़कर मदरसों में हम बच्चों को नहीं भेजते, उसी प्रकार विज्ञान के युग में पुराने ग्रन्थों मं सब बातें ठीक नहीं हैं, वहीं तक ठीक हैं जहां तक वह मनुष्य को भलाई की ओर प्रेरित करती हैं। धर्म भी वहीं अपनाने योग्य है जो विज्ञान पर आधारित है। आज सन्तान उत्पत्ति आर्शीवादों से हम नहीं मानते, न इससे कोई शारीरिक बिमारी ठीक होती है। ज़माने के नये अविष्कारों के साथ बदलना आवश्यक है और हम बदल रहे हैं। परम पूजनीय भगवान देवात्मा धर्म की दुनियां में नई रोशनी लाए हैं। नई सचाईयों का अविष्कार किया है, उन्हें जानने की आवश्यकता है। इन सभाओं में उन सचाईयों को बताया जाएगा, इसलिए उससे लाभ उठाने की आवश्यकता है।

1.6.2017 सुबह 9 बजे :- सभापति श्रीमान बलदेव सिंह जी। सभापति जी ने प्रश्न उत्तर के द्वारा पाप वा पुण्य को समझाने का यत्न किया। इस विषय में देवात्मा की रोशनी में इसकी परिभाषा बताई कि कोई चिन्ता वा क्रिया जिसका परिचालक कोई उच्च भाव नहीं, वह चिन्ता व क्रिया उच्च गति वा पुण्य का काम नहीं। कई बार वह भी नीच गति बन जाती है। कई बार सभा करवाके, उपदेश देकर, भजन गाकर, अन्य सेवाएं करके, दान देकर मनुष्य नीच गति ही कर बैठता है। उच्च भाव के बिना न कोई उच्च गति है और न कोई धर्म है। पहले उच्च बनो, उच्च भाव उपजाओ, तभी उच्च गति सम्भव है।

16.3.2017ए रात 8:30 बजे :- सभापति श्रीमान बलबहादुर सिह जी सुभाष सेतिया जी ने, "पाऊं मैं धर्म का जीवन" नामक भजन का गान किया। सभापति जी ने बताया कि ग्रीस के बिना मशानरी आवाज करने लगती है, उसी प्रकार सम्बन्धों में भी सत्गुरू की रोशनी और शक्ति नामक ग्रीस (Lubricatioin) की आवश्यकता है। देव समाज में गुरू की ज्योति और शक्ति की ग्रीस से सम्बन्ध मीठे और मेल मिलाप के बनते हैं। दुनियां में घर घर में सम्बन्धों मं नर्क है। अपने सम्बन्धों में भी नर्क का ब्यान करते हुए बताया कि गुरू की संगत ने किस प्रकार सम्बन्धों में मधुरता और सुन्दरता लाई है। सम्ब्न्धों में कड़वाहट वा टकराहट के कारणों के जाने बिना, सम्बन्ध बेहतर नहीं हो सकते।

फिर श्रीमान बलदेव सिंह जी ने बताया कि जब तक हम दूसरों के गुणों, उनके उपकारों,

उनके दुखों और अपनी कमियों, अपराधों और खराबियों को नहीं देखते सम्बन्धों में बेहतरी नहीं आ सकती। गुरू की रोशनी में जितना यह अन्धकार दूर होगा, सम्बन्ध बेहतर होंगे। जो 2 इस अन्धकार से निकले हैं, उनके सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किए।

17.3.2017 सुबह 9:00 बजे: – सभापति श्रीमान बलदेव सिंह जी। सभापति जी ने बताया कि देव समाज धर्म की सांईस है। सांईस क्या सत्य है और क्या झूठ, क्या सम्भव है और क्या असम्भव का निर्णय करती है, इसी प्रकार देव समाज सच्चे और झूठे धर्म का निर्णय करती है। उसके बाद सभापति जी ने प्रणाम करने का अर्थ समझाया। सच्चा प्रणाम वही है, जिसमें हमारे सिर के साथ सम्भव पूर्वक दिल भी झुकता हो। इससे दीनता बढ़ती है। अध्यापिकों, डाक्टरों और अन्य उपकारियों के उपकार सामने लाकर प्रणाम किया जाए तो वह सच्चा प्रणाम है। उसके बाद सभापति जी ने बहुत गुणवान व्यक्तियों के गुणों का वर्णान किया। सभापति जी ने बताया कि अपनी बड़ी बहन को प्रणाम करके मुझे अपनी मां की याद आ जाती है। श्रद्धेय श्रीमान ईश्वर सिंह जी को प्रणाम करना याद करके उनका दिल भर आया। बहुत अच्छा वातवारण बना।

17.3.2017 रात 8:30 बजे : – सभापति श्रीमान बलबहादुर सिंह जी सभापति जी ने हमारे जीवन में विरासत के महत्व को समझाने का यत्न किया। हमारी शारीरिक, मानसिक वा हार्दिक गुणों का विकास विरासत पर ही निर्भर है। उसके बाद हमारे इर्द गिर्द का वातावरण है जो हमारे जीवन को प्रभावित करता है। देव समाज हमें ऐसा वातावरण प्रदान करती है, जो हमारी विरासत को विकसित करके हमारी काया कल्प कर देती हैं। इस वातावरण से बाहर जाकर जिन जिन ने हानियां उठाई हैं, उनके भी बहुत शिक्षाप्रद उदाहरण प्रस्तुत किए। विरासत पर हमारा कोई ज़ोर नहीं, परन्तु वातावरण हम अपने और अपने बच्चों के लिए चुन सकते हैं। देव प्रभावदायक वातावरण की आवश्यकता को हम सबको अनुभव करना चाहिए।

18.3.2017 सुबह 9:00 बजे : – सभापति श्रीमान बलदेव सिंह जी। सभापति जी ने बताया कि शेख़चिल्ली की तरह मनुष्य अपनी हानि कर बैठता है। परन्तु अपनी हानि और विनाश से बेसुध है। मिथ्या विश्वास अन्धेरा पैदा करते है। उसको चलाने वाले उसके भाव हैं न कि बाहर की कोई शक्ति। यात्राओं में ख़ौफनाक हादसे होते हैं। यात्राएं मनुष्य के नीच सुख अनुरागों को नहीं दिखा सकती, न कोई यात्राओं से आत्म चिन्तन की प्रेरणा पैदा होती है। भगवान देवात्मा की विशेष संगत के बिना मनुष्य आत्म – निरीक्षण नहीं कर सकता। देवात्मा की ज्योति हमें अपना प्रकृत रूप दिखाती है। मनुष्य धन कमाना अपना लक्ष्य समझता है, गुरू महाराज फरमाते हैं कि यह जीवन का लक्ष्य नहीं, जीने का साधन मात्र है। जीवन का लक्ष्य आत्म ज्ञान और आत्म कल्याण है।

18.3.2017 रात 9:30 बजे: – सभापति श्रीमान बलबहादुर सिंह जी। सभापति जी ने बताया कि हम सुख चाहते हैं। हम बिमारी नहीं चाहते। मान बड़ाई, प्रशंसा चाहते हैं, परन्तु कई बार अपमानित भी होना पड़ता है। निन्दा भी सहनी पड़ती है। कई प्राकृतिक घटनाओं से हमें दुख पहुँचता है। धन, दौलत, सम्पति की हानि होती है।

इनसे जो दुख उत्पन्न होते हैं, उनका चित्रण किया। धन अनुराग की हानियों के विषय में बताया।

19.3.2017, सुबह 9:00 बजे:- सभापति श्रीमान बलदेव सिंह जी। इस सभा में बताया कि विश्व में परिवर्तन का नियम जारी है इसमें हर अस्तित्व बदल रहा है। हमारे व्यवहार, गतियां, विचार बदलते रहते हैं। एक ईमानदार जन का उदाहरण दिया जिसने हज़ारों रूपये से भरा हुआ बक्सा मालिक तक पहुँचाने के लिए पूरा यत्न किया और पहुँचाए 20:25 वर्ष संगत से दूर रहा, तो इतना बेईमान और झूठा बन गया कि एक रूपये के पीछे भी झूठ बोलने लग गया। हमारी नेक वा अच्छाई घट रही है या बढ़ रही है। यदि हम पहले कोई सेवा, साधन करते थे, अब नहीं करते तो बुरा परिवर्तन आ गया। अपने बुरे परिवर्तन पर पहरा देना है। बनने और बिगड़ने की सोझी प्राप्त करनी है। यह संगत मनुष्य को बनने और बिगड़ने की सोझी देती है।

19.3.2017 समय 3 बजे दुपहिर :- एक सभा श्रीमान हेमन्त कुमार जी के घर श्रीमान बलबहादुर सिंह जी वा डाक्टर मुन्शा सिंह जी ने करवाई परिवारिक सुख शान्ति के लिए प्यार और सन्मान को आवश्यक बताया। सभा के बाद हेमन्त कुमार जी ने चाय आदि से आए जनों की सेवा की।

19.7.2017 रात 8:30, सभापति श्रीमान बलबहादुर सिंह जी। सभापति जी ने बताया कि हम सुख अनुरागी हैं जब हमारा कोई सुख पूरा नहीं होता नीच घृणा वा गुस्सा पैदा होता है। फिर हमारी गति वा बोल हानिकारक होते हैं। अनेकों घटनाओं द्वारा इस विषय को स्पष्ट किया कि किसी सुख पर चोट लगने से आत्म घात तक नौबत आ जाती है। नीच घृणा के परिणाम सदा दुखदाई होते हैं। श्रीमान बलदेव सिंह जी ने भी अपनी निजी ज़िन्दगी में इसके ख़ौफनाक रूप का ज़िकर किया।

20.3.2017 सुबह 9:00 बजे :- सभापति श्रीमान बलदेव सिंह जी। सभापति जी ने बताया कि विज्ञान की नई खोजों के द्वारा चारों तरफ विकास हुआ है। शारीरिक रोगों को विज्ञान ने जाना है। देवात्मा ने आत्मा के रोगों और उसके सही ज्ञान को खोजा है, जो किसी ग्रन्थ में मिलता है। देव धर्म इस सिद्धान्त को मानता है कि जो विकास का साथी बनता है, वही जीवित रहता है। विनाशकारी जीवों की नस्लें नष्ट हो रही है। पशुओं, पौधों की नई किस्में खोजी जा रही है। हमारा जीवन भी इसी नियम के अधीन है। यदि आत्मा को बलवान बनाना है, तो दूसरों के काम आना है। शारीरिक वा मानसिक सेवा भी विकास करती है, परन्तु सर्वोत्म सेवा किसी को किसी बुराई से बचाना है, आत्मा का ज्ञान देना है। सेवा उच्च भावों से हो। सेवा द्वारा हमारी जीवनी शक्ति रीचार्ज होती है।

डा० मुन्शा सिंह जी :- मैं मरीजों की मुफ्त सेवा करके उनका धन्यवाद नहीं करता, कई बार अपशब्द बोल जाता हूं। आगे से इस बात का बहुत ख़्याल रखूंगा।

श्रीमान बी. पी. सिंह जी :- मैं चारों जगतों की सेवा करता था पर आज इस विषय में नई रोशनी मिली है।

(एक हाजरीन)

देव आश्रम डेरा बस्सी में सत्संग

यहां 15 अप्रैल से 23 अप्रैल 2017 तक सत्संग रखा गया। पत्रिकाओं में इसकी सूचना दी गई। कई धर्म सम्बन्धियों को फोन द्वारा सूचित किया गया। यात्रियों के लिए साधारण लंगर का प्रबन्ध किया गया। साधन मन्दिर की सफाई, बिछाई आदि की गई। श्रीमान जगदीश जी ने अपनी वर्तमानता में सब काम करवाया और 15 से सुबह वहां डेरा लगा लिया। उसी दिन श्रीमान बलबहादुर सिंह जी वा श्रीमान बलदेव सिंह जी भी रहने के लिए पहुँच गए। फिर और धर्म सम्बन्धी श्री डाक्टर जैरथ जी और उनकी धर्म पत्नी देहरादून से, प्रिंसीपल दीवान जी गंगा नगर से, श्री ओम प्रकाश वर्मा जी, यमुना नगर से, बीबी अशोका जी अम्बाला से, श्रीमान सुखदेव सिंह जी इंगलैंड से पहले ही पहुँच गए थे। उनकी धर्म पत्नी, माता जी और परिवारिक जन पहले से पहुँच गए थे। अगले दिन गोनियाना से श्रीमान सुखदेव जी और उनके सपुत्र, दड़बा से श्रीमान जलधर जी और मधूसूदन जी, गंगानगर से श्री प्यारा सिंह जी भी पहुँच गए। उसके बाद लखनऊ से अग्रवाल साहिब, बंगा से खुशपाल सिंह जीए गंगानगर से श्रीमान गोपाल जी भी पहुँच गए। अशोक कुमार जी गंगानगर से, ओम प्रकाश आदर्श, एक दिन श्रीमान चन्द्रगुप्त जी और उनकी धर्म पत्नी, पंचकूला से श्रीमान सुभाष जी और उनके परिवारिक जन भी कई सभाओं में शामिल हुए। चण्डीगढ़ से मिसिज़ सुरजीत बराड़ और डा० सतिन्द्र ढिल्लों आते रहे।

सभाएं श्रीमान बलदेव सिंह जी और श्रीमान बलबहादुर सिंह जी ने करवाई। भजनों का गान श्रीमान जगदीश जी ने किया।

सभाओं के विषय निम्नलिखित थे: -

प्रभावों का महत्व और विशेष रूप से देव प्रभावों का महत्व। सुबह की सभाएं श्रद्धा, कृतज्ञता और हानि परिशोध के विषय में ईतवार की सभा पूजनीय भगवान की महिमां के विषय में हुई। सभाओं मे एक एक बार कई जन प्रभावित होकर अपने उपकारियों के विषय में और महान जनों के गुणों के सम्बन्ध में बहुत दिल की गहराई से बोलते रहे। श्रीमान बलबहादुर सिंह जी, जगदीश जी, जैरथ जी और दीवान जी के भाव प्रकाश बहुत प्रभावित करने वाले थे। इस प्रकार यह सत्संग अधिकारी जनों के लिए काफी लाभ दायक सिद्ध हुआ। निम्नलिखित जनों ने भाव प्रकाश किए।

<u>भाव प्रकाश</u>

डाक्टर सतिन्द्र ढिल्लों :- मैं गहरे भावों से समाज का और सभा कराने वाले दोनों श्रीमान जी का तहदिल से धन्यवाद करती हूं और उनके आगे शीश झुकाती हूं। मेरे सामने मेरे पड़दादा जी का उपकारी रूप आता रहा जो पिता जी को समाज में लेकर आए। यदि ऐसी समाज न मिलती तो हमारा क्या होता? पिता जी चाहते थे कि मेरे बच्चे समाज का काम करें, परलोक में जाकर उनको क्या जबाब दूंगी? पिता जी किस प्रकार अपनी सेहत की परवाह किए बिना, बीमार होकर भी समाज सेवा का काम करते रहे। माता जी ने भी हमारे लिए बहुत मेहनत की, उनको बार बार धन्यवाद देती रही हूं। मेरी बेटी का मैनेजर भी मेरा बार बार धन्यवाद करता है, कि किस प्रकार वह मेहनती और ईमानदार है। श्रद्धेय श्रीमान गुरूवन्त सिंह जी के उपकारों के आगे भी दिल झुकता रहा है। अपने बड़े

बहन जी की तो बहुत अधिक मेहरबानियां मुझे नज़र आती है। उनके गुणों के आगे भी झुकती रही हूं। बाई जी के गुणों और उपकारों के आगे झुकती रहती हूं। मेरे अधीन एक मनजीत लड़की काम करती थी, उसका गुण सामने आता रहा कि वह कभी किसी से लड़ती नहीं थी। मेरे भाईयों का और मेरी भावजा का प्यार और मेरा ख़्याल रखना उनके आगे झुकाता रहा है। श्रीमान बलबहादुर सिंह जी का जीवन भी बहुत प्रभावित करता है। श्रीमान जगदीष जी से भी क्षमा मांगी।

श्रीमान हुशियार सिंह जी :- खुशनसीब हूं कि अच्छा परिवार मिला। उनके किए का कर्जा उतार नहीं सकता। मुझे अपने पिता की सेवा करनी चाहिए थी, परन्तु वह मेरी सेवा करते रहे। इसी प्रकार माता जी भी मेरी सेवा करती रही। मेरे भाई ने तो मुझे बचाने के लिए पानी की तरह पैसा बहाया है। पिता जी सारी सारी रात मेरे लिए जागते थे।

श्रीमती भजन कौर जी:- मामा जी ने सिरसा हस्पताल में जो उपकार किए वह भुला नहीं सकती। और भी कई बार हमारा ईलाज करवाया। मां का कर्जा वा उपकार सदा याद आता है। पिता जी एक बार नराज़ हो गए थे, मैं अपने हाथों से उन्हें स्नान करवाती थी।

प्रिंसीपल दीवान जी :- यहां आकर यही समझ आई है कि मैंने अपना जीवन व्यर्थ गंवाया है। अन्त में मैं इस सच्ची जगह पर पहुँच गया हूँ। बहुत दर खटखटाए, परन्तु गोपाल जी ने इस दर का पता बताया, इनके नेक जीवन से प्रभावित हुआ। इन्होंने कनल साहिब की पुस्तक दी, और किताबें देते रहे। सभाओं में बैठकर मेरा काला पक्ष उजागर हुआ। दूसरी शादी के चक्र में 8 वर्ष अपनी पत्नी को मायके छोड़ आया। इस संगत की कृपा से सेवक बनकर उनसे क्षमा मांगी। फिर भी मैं झगड़ा करता रहता हूं। क्षमा अभी पूरी नहीं हुई। अपने एक मुलाज़म का सन्मान किया। काश! मेरा परिवार इस संगत से जुड़ जाए।

श्रीमान अशोक कुमार जी :- अपने मुंह पर थप्पड़ मारने लगे, बड़ी मुश्किल से रोका। दीवान साहिब के पैरों में सिर रखकर क्षमा मांगी।

अशोक जी :- मैं सहायकारी शक्तियों का धन्यवाद करती हूं, जिनकी कृपा से मुझे यह दर मिला। मैं मान्य श्रीमान जी की बहुत अभारी हूं जो इस आयु में सत्संग रखकर हमारा भला करते हैं। कल्याण सत्संग के बाद से ही मैं अपने आपको जानने के संग्राम में हूं। श्रद्धा भाव का महत्व कुछ समझ आया है। उसके बिना धर्मवान बन ही नहीं सकते। जब से हररोज कापी में लिखने लगी हूं, तो कुछ अपना आप दिखाई देने लगा है। मेरे भीतर घमंड, प्रशंसा बहुत है। हानिपरिशोध की सभा मं एक जन ने जो लिखकर दिया था, तो मुझे अनुभव हो रहा था कि मैं कब दीन बनूंगी। मैं अपना निरीक्षण करती रहती हूं कि अपने विरुद्ध सुनकर मैं शान्त रह सकती हूं या पहले की तरह मिर्चे लगती है।

श्रीमान जी हमारी आत्माओं के लिए जितना दर्द अनुभव करते हैं, उनसे प्रेरणा ली कि प्रतिमास कुछ लिखकर या जो पढ़कर लाभ होता है, लिखकर भेजा करूंगी। जगदीश जी के भजनों से बहुत लाभ होता रहा। श्रीमान बलबहादुर जी ओर जगदीश जी कड़कड़ाती धूप में समान लाते हुओं को देखकर दिल झुकता रहा। फिर सब सेवकों के प्रश्नों के उत्तर देते रहते हैं। जिन जिन से सेवाएं पाई हैं, उन सब का धन्यवाद करती हूं।

गोपाल कृष्ण :- सभाओं मं बैठकर मुझे

Regd. Postal No.CHD (0077) 2015-17
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

एक बूढ़ी माता याद आती रही उसकी कुछ न कुछ सेवा करता रहता हूं। उसके चार बेटे हैं पिता की तरह ही शराबी और निकम्में हैं। उस औरत ने सारी उमर दूसरों के घरों में मजदूरी करके वा गोबर उठा उठाकर उन्हें पाला, कर्ज़े उठाकर उनकी शादियां की, स्वंय मेहनत करके वह कर्ज़े उतारे। सबसे दुख पाकर उनकी सेवा करती रही। उनको देखकर मुझे मेरी मां याद आती रही। वह भी बहुत मेहनती और सेवाकारी हैं। किसी को ज़रूरत होती है तो कई कई दिन उनके घरों में सहायता करती रहती। मिथ्या विश्वासी हैं, परन्तु अपने विश्वासों अनुसार व्रत, उपासना आदि नियमित रूप से करती हैं।

मेरे पिता जी बहुत ही भली प्रकृति रखने वाले हैं। उनकी निकटता के कारण बुराईयों से बचा रहा हूं। वह बहुत नम्र और सुन्दर हृदय रखते हैं। बहुत सहनशील है। मैंने उनके मुंह से कभी कठोर वचन नहीं सुना। आर्थिक रूप से कमज़ोर होकर भी दूसरों की सहायता करते रहते हैं। उनका बहुत सात्विक और पवित्र जीवन है। धर्म की जिज्ञासा है। सत्संगों के लिए कई कई दिन घर, दुकान का त्याग कर देते हैं। उनमें ईमानदारी का भाव बहुत गहरा है। मैं अपने आपको उनकी तुलना में मेहनत, ईमानदारी और सहनशीलता में बहुत तुच्छ बोध करता हूं।

खुशपाल सिंह बंगा:- श्रद्धा भाव की सभाएं सुनकर मुझे बोध हुआ कि मुझमें श्रद्धा भाव बहुत कम है। मैं निज के साधन को कम समय देता हूं। यह मेरी बहुत बड़ी भूल है। आगे से मैं श्रद्धा भाव को बढ़ाने के लिए प्रतिदिन लिखा करूंगा।

7-8 वर्ष पहले मुझे प्यारा सिंह का फोन आया कि मैं चण्डीगढ़ हूं, यहां एक निराली समाज है, जो हृदय परिवर्तन करती है। मैं रोज का शराबी और कितनी नीच गतियों में फंसा हुआ था। परन्तु चण्डीगढ़ आकर मेरा बहुत भला हुआ है। मैं काफी देर बुराईयों से बचा रहा, परन्तु धन अनुरागी होने के कारण, फिर दलदल में फंस गया। पता नहीं कितनी बार गिरा और कितनी बार उठा, जब सभाओं में आ जाता हूं, तो बच जाता हूं, अभी भी मैं नीच गतियों से पूरी तरह नहीं बचा। यदि मैं समाज में न आता, तो अब तक बच नहीं सकता था। श्रीमान जी का धन्यवादी हूं कि मेरे जैसे को आने से बन्द नहीं किया, क्योंकि कई बार वायदा तोड़ देता था। अब मैं आगे से कुछ बेहतर हूं। यह देव समाज की कृपा से सम्भव हुआ है। मुझे बल मिले मैं पूरी तरह निकल सकूं।

एक हाजरीन

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर म. न. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

Book Posts